International Year of CHEMISTRY 2011

आसिमा चटर्जी

भारतीय विज्ञान कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्षा

Asima Chaterjee

First woman president of Indian Science Congress

- डॉ. सुबोध महंती[6]

- Dr. Subodh Mahanti

"विज्ञान के क्षेत्र में किसी-न किसी रूप से कार्यरत वैज्ञानिकों, शिक्षकों और सभी व्यक्तियों को न केवल विद्यार्थियों, बल्कि आम जनता को भी अपने इस पावन कार्य की उपयोगिता को समझने में सहायता करनी चाहिए। ऐतिहासिक तथ्य और वैज्ञानिक प्रगति की अपेक्षाएं भी आम जन में विज्ञान की समझ को विकसित करने की परम आवश्यकता की ओर इंगित करती हैं। हमारे प्रयत्नों की सफ़लता, ईमानदारी और उत्साह के साथ साथ हमारी टीम भावना की गहराई पर भी निर्भर करती है, जिसके साथ ज्ञानोदय के इस कार्य से हम अपने आप को संबोधित करेंगे।"

भारतीय विज्ञान कांग्रेस (1975) में अपने सामान्य अध्यक्षीय संबोधन में आसिमा चटर्जी

"... *यदि विज्ञान की मानवीय जटिलताओं पर उचित ध्यान नहीं दिया गया, तो विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के सभी प्रयत्न व्यर्थ होंगे... विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का लक्ष्य केवल देश की भौतिक जरूरतों की पूर्ती ही नहीं, वरन् उच्च उद्देश्यों एवं वैश्विक समुदाय की धारणा से एक बेहतर संसार का निर्माण करना भी है। राष्ट्रों द्वारा इस दूरदर्शिता के साथ कार्य करने का समय आ गया है।*"

भारतीय विज्ञान कांग्रेस (1975) में अपने सामान्य अध्यक्षीय संबोधन में आसिमा चटर्जी

आसिमा चटर्जी ने अपने अनुकरणीय अदम्य साहस, पूर्ण प्रतिबद्धता, प्रबल इच्छा, कठिन परिश्रम और ज्ञान की खोज के प्रति अतृप्त लालसा के बल पर बड़ी कठिनाइयों के बावजूद सफ़लता हासिल की। उनके दर्शन एवं कार्य संस्कृति को लगभग 30 वर्ष पूर्व बंगला साप्ताहिकी के साथ एक साक्षात्कार में कहे गए उनके इन शब्दों से बयां किया जा सकता है: 'मैं जीवित रहने तक कार्य करते रहना चाहती हूं।' इस वचन को उन्होंने पूर्णतया निभाया। बड़ी संख्या में शोधार्थियों ने उनके निर्देशन में पी एच.डी. और डी.एस सी. की उपाधियां अर्जित की। लेकिन भारतीय और विदेशी विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संस्थानों एवं उद्योग में अपनी विरासत को आगे बढ़ाने के लिए प्राकृतिक उत्पाद रसायनविदों के एक स्कूल की स्थापना करना, मेरे विचार से, भारतीय विज्ञान में उनका सर्वोत्तम

[6] डॉ. सुबोध महंती, वैज्ञानिक 'जी', विज्ञान प्रसार, ए 50, सेक्टर-62, नोएडा 201309 (उत्तर प्रदेश), ई मेल: smahanti@vigyanprasar.gov.in

योगदान है। --**एस. सी. पकराशी, एक जाने माने प्राकृतिक उत्पाद रसायनविद और आसिमा चटर्जी के पी एच.डी. छात्र**

आसिमा चटर्जी (23 सितंबर 1917 – 22 नवंबर 2006) भारत की एक अग्रणी महिला वैज्ञानिक थीं। वह किसी भारतीय विश्वविद्यालय द्वारा 1944 में डॉक्टरेट ऑफ़ साइंस (डी.एस सी.) की उपाधि प्राप्त करने वाली प्रथम महिला और एक भारतीय विश्वविद्यालय में 'चेयर' का पद प्राप्त करने वाली प्रथम महिला वैज्ञानिक थीं। वह भारतीय विज्ञान कांग्रेस (1975) की प्रथम महिला महाध्यक्ष भी थीं। उनका शोध कॅरिअर पांच दशक लंबा था। उन्होंने भारतीय एवं विदेशी शोध जर्नलों में 350 से अधिक शोध पत्र प्रकाशित किए तथा 50 से अधिक पी एच.डी. छात्रों का मार्गदर्शन किया। भारतीय औषधीय एवं अन्य पौधों से प्राप्त प्राकृतिक उत्पाद, विशेषतः एल्कालॉयड (देखें बॉक्स), कूमरिन्स (पादप जनित पॉलीफेनोलिक यौगिकों का एक समूह) और टर्पेनॉइड्स (संभवतः प्राकृतिक उत्पादों का सर्वाधिक व्यापक समूह - प्रीनीलिपिड्स का एक उपवर्ग) के क्षेत्र में किए गए महत्वपूर्ण शोध कार्य के लिए उन्हें जाना जाता है। उनके कार्यों के संदर्भ व्यापक स्तर पर दिए जाते हैं और उनके कुछ महत्वपूर्ण कार्य उनके कार्य क्षेत्र से संबंधित पाठ्य पुस्तकों का अंश बन चुके हैं। इंडोल एल्कालॉयड्स पर उनके पुरोगामी शोध कार्य ने भारत और विदेशों में इस कार्य क्षेत्र में अनुसंधान कार्यों पर काफी प्रभाव डाला। उन्होंने भारत में प्राकृतिक उत्पाद रसायनविदों का एक स्कूल स्थापित किया।

रौवोल्फिया कैनेसंस के इंडोल एल्कालॉयड्स पर अपने रासायनिक अनुसंधान से 1938 में चटर्जी ने अपना शोध कॅरिअर आरंभ किया। उन्होंने लगभग सभी मुख्य प्रकार के इंडोल एल्कालॉयड्स का अध्ययन किया। चटर्जी के अध्ययनों ने अजमलीसीन और सर्पाजीन की संरचना और त्रिविम रसायन को समझाने में महती योगदान दिया। वास्तव में यह चटर्जी ही थीं, जिन्होंने सर्वप्रथम सर्पाजीन का सटीक त्रिविम विन्यास सुझाया था। रज़ाया स्ट्रिक्टा से इंडोल एल्कालॉयड्स के जीवात् जनन में एक प्रमुख उत्पाद अर्थात जीसोसेहाईजाईन का पृथक्करण और अभिलक्षणन उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक थी।

चटर्जी ने स्टेरॉयडी एल्कालॉयड्स रसायन पर भी कार्य किया। उन्होंने कई एल्कालॉयड्स के संश्लेषी अध्ययन किए। रौवोल्फिया कैनेसंस का मुख्य एल्कालॉयड यानी रौवोल्सिन का त्रिविम विनिर्दिष्ट संश्लेषण उनके संश्लेषी कार्य की प्रमुख उपलब्धियों में से एक है। इस एल्कालॉयड का संश्लेषण करने के लिए उन्होंने वांछित बीटा फेनिल एथेनॉलएमीन्स को तैयार करने की एक साधारण प्रक्रिया विकसित की।

उन्होंने टर्पेनॉइड्स रसायन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। टर्पेनॉइड्स के अध्ययन के लिए उन्होंने अफनामिक्सिस पोलीस्टाकिया, वाल्सुरा टैबूलेटा, सड्रेला टूना, जेंथोजाइलम रेट्सा, आर्टिमिसिया वुल्गारिस, क्रोटन कौडेटस और कैलीकार्पा मैक्रोफिला सहित एक दर्जन से अधिक पौधों का अच्छी तरह से परीक्षण किया। उन्होंने टर्पेनॉइड्स के रूपांतरण का विस्तृत अध्ययन किया और लेविस अम्ल उत्प्रेरित पुनर्विन्यास के जरिए विभिन्न संरचनाओं वाले टर्पेनॉइड्स का सहसंबंध स्थापित किया। यह एक अनुपम कार्य था, जिससे टर्पेनॉइड्स के संरचनात्मक संबंधों की एक बेहतर समझ विकसित हुई।

कूमरिन्स रसायन पर भी चटर्जी का कार्य अत्यधिक महत्वपूर्ण था। कूमरिन्स पर उनका कार्य ल्यूवुंगा स्कैन्डेंस से पृथक किए गए ल्यूवैन्जेटिन की संरचना की व्याख्या के साथ आरंभ हुआ। उन्होंने और उनके समूह ने रूटाशिया, अंबेलीफरा, कंपोजिटे, यूफोरबिशिया और थाइमेलेशिया प्रजातियों से संबंधित

भारतीय औषधीय पौधों से कूमारिन्सयुक्त रोचक प्रतिस्थापन पैटर्नों की एक बड़ी संख्या को पृथक किया। उन्होंने प्रीनाइलेटेड कूमरिन्स पर विविध लेविस अम्लों की क्रिया पर विस्तृत अध्ययन किया और जटिल कूमरिन्स के कई साधारण संश्लेषी मार्ग तैयार किए।

चटर्जी ने मैकेनिस्टिक कार्बनिक रसायन में भी कार्य किया। उन्होंने फेनिलएथेनॉल के अम्ल उत्प्रेरित हाइड्रैमीन विखंडन क्रियाविधि का अच्छी तरह से अन्वेषण किया। उन्होंने परआयोडिक अम्ल (H_5IO_3) का प्रयोग करते हुए कार्बनिक यौगिकों में दोहरे बंध का पता लगाने और स्थापित करने की एक विधि विकसित की। यह विधि ओज़ोनोलिसिस का एक अच्छा विकल्प थी।

चटर्जी और उनके समूह ने मर्सिलिया मिन्यटा से आयुष 56 नामक एक मिरगीरोधी तथा अल्स्टोनिया स्कोलरिस, स्वेर्टिया चिरैटा, पिक्रोरिजा कुरोआ और केसेल्पिनिया क्रिस्टा से मलेरियारोधी औषधि विकसित की। इन औषधियों का पेटेंट लिया गया और इन्हें विभिन्न कंपनियों द्वारा विकसित किया गया।

अपने समय के अन्य वैज्ञानिकों की तरह आसिमा चटर्जी को भी एक अनुसंधानकर्त्ता के रूप में स्वयं को स्थापित करने के लिए काफी संघर्ष करना पड़ा। इस संबंध में उनके शुरू के पी एच.डी. छात्रों में से एक एस. सी. पकराशी की टिप्पणी पर ध्यान देना अति महत्वपूर्ण हैः "उनके शुरू के पी एच.डी. छात्रों में से एक होने के कारण स्वयं को स्थापित करने के लिए उनके आरंभिक संघर्ष का मैंने बहुत निकट से अवलोकन किया है। खास तौर पर अपर्याप्त रसायनों एवं बहुत कम वित्तीय सहायता से चलने वाली विश्वविद्यालयों की कमियों भरी प्रयोगशालाओं में शोध कार्य के लिए वह समय बहुत ही कठिनाइयों भरा था। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना नहीं हुई थी तथा वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् तब निर्माणाधीन अवस्था में ही थी। अनुसंधान निर्देशकों को आम तौर पर न केवल रसायनों, उपकरणों आदि के लिए, बल्कि प्रारंभिक और विदेशों से करवाए जाने वाले लगभग सभी स्पेक्ट्रमी विश्लेषणों तक के लिए धन लगाना पड़ता था। छात्रवृत्तियां बहुत कम और आर्थिक रूप से अपर्याप्त हुआ करती थीं; मुद्रण, परीक्षा शुल्क और यहां तक कि विदेशी परीक्षक(कों) के पास शोध प्रबंध भेजने, जो कि अनिवार्य था, के डाक प्रभार सहित शोध प्रबंध जमा करवाने की सभी आवश्यक लागत का भुगतान करने के लिए अधिकतर शोध छात्रों को कार्य करना पड़ता था, जबकि कॅरिअर के बतौर शोध में नाममात्र को ही रोजगार मिल पाता था। जब मैं उनसे जुड़ा तब उनके पास मात्र रु. 300/- प्रति वर्ष का ही अनुदान था और तीन कॉलेज शिक्षक उनके अंशकालीन शोध छात्र थे।"

आसिमा चटर्जी का जन्म 23 सितंबर 1917 को बंगाल के एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ। वह कलकत्ता (अब कोलकाता) में बड़ी हुईं। अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय के स्कॉटिश चर्च कॉलेज में प्रवेश लिया, जहां से उन्होंने 1936 में रसायन विज्ञान ऑनर्स में स्नातक की उपाधि ली। सन् 1938 में उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से कार्बनिक रसायन विज्ञान (मेजर) में एम.एस सी. की उपाधि अर्जित की। सन् 1944 में उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से ही डी.एस सी. की उपाधि अर्जित की। भारत में प्राकृतिक उत्पाद रसायन विज्ञान विषय के प्रणेता पी. के. बोस उनके शोध निर्देशक थे। उनका शोध प्रबंध पादप उत्पाद रसायन विज्ञान और संश्लिष्ट कार्बनिक रसायन विज्ञान पर था। उनके शोध प्रबंध के परीक्षक नोबल पुरस्कार विजेता ए. आर. टॉड थे जिन्होंने खूब सराहना की ऐसा कहा जाता है कि औषधीय पादपों में उनकी रुचि अपने पिता इंद्र नारायण मुख़र्जी जो आयुर्विज्ञान से जुड़े होने के साथ साथ एक शौकिया वनस्पतिविद भी थे, को देखकर उत्पन्न

हुई। उनके पति बरदानंद चटर्जी, जो एक पहुंचे हुए भौतिक रसायनविद् थे, बंगाल इंजीनियरिंग कॉलेज (वर्तमान में मानद विश्वविद्यालय) के उप प्राचार्य थे।

सन 1940 में चटर्जी ने लेडी ब्राबॉर्न कॉलेज में रसायन विज्ञान के संस्थापक अध्यक्ष की हैसियत से कार्यग्रहण किया। सन् 1944 में उन्हें कलकत्ता विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान में एक मानद व्याख्याता के रुप में नियुक्त किया गया। सन् 1947 में वह संयुक्त राज्य अमेरिका गईं, जहां उन्होंने पहले तो एल. एम. पार्क्स के साथ विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में प्राकृतिक रूप से प्राप्त होने वाले ग्लाइकोसाइड्स पर कार्य किया और फिर एल. जेख्माइस्टर के साथ कैलिफ़ोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉजी, पासाडीना में कार्य किया। कैलिफ़ोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ़ टेक्नोलाजी में उन्होंने कैरोटेनॉइड्स और प्रो विटामिन्स पर कार्य किया। सन् 1949 में नोबेल पुरस्कार विजेता पॉल कैरर के साथ कार्य करने के लिए वह जुरिख विश्वविद्यालय गईं और वहां जैव सक्रिय एल्कालॉयड्स पर उन्होंने कार्य किया। सन 1950 में वह वापिस भारत लौटीं।

सन 1954 में चटर्जी ने लेडी ब्राबॉर्न कॉलेज छोड़ दिया और कलकत्ता विश्वविद्यालय के यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ साइंस के रसायन विज्ञान विभाग के साथ वह जुडीं, जहां अपने सक्रिय अकादमिक कॅरिअर के अंत तक उन्होंने कार्य किया। उनकी नियुक्ति कलकत्ता विश्वविद्यालय के सर्वाधिक प्रतिष्ठित और आकांक्षित पदों में से एक खैरा प्रोफेसर के पद (चेयर) पर हुई। वह इस पद पर 1982 तक रहीं।

चटर्जी ने सन 1973-1977 के दौरान भारतीय औषधीय पौधों पर कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित छह खंडों के एक ग्रंथ भारतीय वनौषधि का संशोधन, अद्यतनीकरण और संपादन किया। यह ग्रंथ मूल रूप से के. पी. बिस्वास द्वारा संपादित किया गया था। वह वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् द्वारा छह खंडों में प्रकाशित ग्रंथ ट्रीटाइज ऑन इंडियन मेडिसिनल प्लांट्स की मुख्य संपादक थीं।

चटर्जी भारतीय विज्ञान कांग्रेस से बहुत घनिष्ठता से जुड़ी हुई थीं। इसके महासचिव और कोषाध्यक्ष दोनों पदों पर उन्होंने तीन तीन वर्ष कार्य किया। इसके महाध्यक्ष के पद पर 1974 से 1977 तक उन्होंने तीन वर्ष कार्य किया। रसायन विज्ञान की प्रोफ़ेसर होने के साथ साथ उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय को अनेक तरह से अपना योगदान दिया। विश्वविद्यालय सीनेट व सिंडिकेट की सदस्या के रूप में भी उन्होंने अपनी सेवाएं दीं। अकादमिक परिषद् और रसायन विज्ञान में बोर्ड ऑफ स्टडीज के साथ ली वह संबद्ध रहीं।

आयुर्वेदिक दवाओं के विकास के लिए भारतीय औषधीय पौधों पर अनुसंधान हेतु एक क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थान की स्थापना में उन्होंने कारगर भूमिका निभाई। यह संस्थान साल्ट लेक, कलकत्ता में केंद्र राज्य सहयोग से केंद्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध परिषद् के तत्त्वावधान में स्थापित किया गया। सुव्यवस्थित नैदानिक जांच के लिए संस्थान के एक अंग के रूप में एक आयुर्वेदिक अस्पताल को भी स्थापित किया गया। चटर्जी को मानद मुख्य समन्वयक बनाया गया और इस हैसियत से उन्होंने अपने जीवन के अंतिम दिनों तक संस्थान को संपोषित करने का कार्य किया।

चटर्जी एक अत्यधिक समर्पित शिक्षक एवं अनुसंधानकर्ता थीं। वह अपने विद्यार्थियों की भलाई का बहुत ख्याल रखती थीं। उन्हीं के शोधार्थियों में से एक, एस. सी. पकराशी ने विद्यार्थियों पर उनके प्रभाव पर कुछ इस प्रकार से टिप्पणी दीः "... मैं 1952 में चटर्जी के शोध समूह के साथ एक पी एच.डी. छात्र के

रूप में जुड़ा ... उन दिनों खास तौर पर अपर्याप्त रसायनों एवं बहुत कम वित्तीय सहायता से चलने वाली विश्वविद्यालयों की कमियों भरी प्रयोगशालाओं में शोध कार्य के लिए वह समय बहुत ही कठिनाइयों भरा था तथा कॅरिअर के रूप में शोध का कोई खास भविष्य भी नहीं था। फिर भी वह अपने विद्यार्थियों को प्रोत्साहित एवं प्रेरित करतीं तथा उनमें प्रतिबद्धता, अखंडता, ईमानदारी, दृढ़ता और एक शोधकर्मी में होने वाले सभी आवश्यक गुणों को स्वयं अपने उदाहरण द्वारा प्रस्तुत करतीं। अध्यापक के रूप में वह अपने कार्य से कभी भी संतुष्ट नहीं रहती थीं। इंसान के रूप में वह एक उदार एवं समझदार महिला थीं। न केवल अपने साथियों के लिए बल्कि जो भी व्यक्ति उनके पास सहायता के लिए आता, उसकी सहायता के लिए वह सदैव तत्पर रहती थीं।

आसिमा चटर्जी का यह मत था कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास में विश्वविद्यालय के अनुसंधान कार्य की एक केंद्रीय भूमिका होती है। भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास में विश्वविद्यालयों की भूमिका पर जोर देते हुए एक बार उन्होंने कहा थाः "चूंकि वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक प्रशिक्षण का मेरुदंड होने के नाते विश्वविद्यालय के अनुसंधान कार्य अभी भी वैज्ञानिक प्रगति की अगुवाई करते हैं और देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की गुणवत्ता को आंकने का विश्वविद्यालय काफी अच्छा मानदंड प्रस्तुत करते हैं, इसलिए विश्वविद्यालयों को राष्ट्रीय स्तर पर अत्यधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए। भारत जैसे विकासशील देश में विश्वविद्यालयों का सशक्तिकरण सर्वाधिक महत्व रखता है। एक शताब्दी से भी अधिक के अनुभव से यह पहले ही साबित हो चुका है कि शिक्षण और अनुसंधान दोनों साथ साथ पुष्पित पल्लवित होते हैं, जबकि इनका अलगाव विपरीत प्रभाव उत्पन्न करता है। एक ऐसे परिवेश में, जहां दोनों को समरुपता से विकसित किया जाए, दोनों से सर्वोत्तम परिणाम हासिल किए जा सकते हैं। शिक्षण एवं अनुसंधान यानी शिक्षा एवं खेल के इस संयोजन में ही विश्वविद्यालयों की वास्तविक शक्ति निहित होती है। यदि इन अकादमिक संस्थानों में अनुसंधान कार्य की अवहेलना की जाए, तो इन संस्थानों से बाहर होने वाला अनुसंधान कार्य भी एक लंबे समय तक फल फूल नहीं सकता। यह कहा जाता है कि युवा शोधार्थियों के साथ निरंतर (प्रभावी) रूप से संपर्क न रखने वाला अनुसंधान संस्थान - चाहे वह किसी भी तत्त्वावधान में कार्य कर रहा हो विरले ही एक पीढ़ी तक रचनात्मक रूप से कार्य कर पाएगा। यह राष्ट्रीय विकास में विश्वविद्यालय अनुसंधान की केंद्रीय भूमिका तथा विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों, के बीच जिनमें राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं और उद्योग भी शामिल हैं घनिष्ठ संबंधों के परम महत्व को रेखांकित करता है।"

सन 1960 में चटर्जी को भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली का फैलो चुना गया। सन् 1961 में उन्हें शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार से नवाजा गया। उनके द्वारा प्राप्त अन्य पुरस्कार थेः कलकत्ता विश्वविद्यालय का नागार्जुन पुरस्कार और स्वर्ण पदक (1940), कलकत्ता विश्वविद्यालय का प्रेमचंद रॉयचंद स्टूडेंटशिप (1942), कलकत्ता विश्वविद्यालय का मौअट पदक (1944), इंडियन कैमिकल सोसाइटी का सर पी. सी. रॉय पुरस्कार (1974), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त हरी ओम ट्रस्ट का सर सी. वी. रामन् पुरस्कार (1982), इंडियन केमिकल सोसाइटी का प्रोफ़ेसर पी. के. बोस पुरस्कार (1988), तथा भारतीय विज्ञान कांग्रेस संघ द्वारा प्रदत्त सर आशुतोष मुख़र्जी मेमोरियल स्वर्ण पदक (1989)। उन्हें बंगाल चैम्बर्स ऑफ़ कॉमर्स द्वारा वीमेन ऑफ़ द ईयर (1975) चुना गया। सन् 1975 में भारत सरकार ने उन्हें अपने प्रतिष्ठित पदम् भूषण सम्मान से अलंकृत किया। चटर्जी को भारत

के महामहिम राष्ट्रपति द्वारा राज्य सभा की सदस्या भी चुना गया। वे इस पद पर फरवरी 1982 से मई 1990 तक रहीं।

चटर्जी ने देश के आम जन में सोचने के वैज्ञानिक ढंग अथवा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करने के महत्व पर बल दिया। उनका मानना था कि भारतीय विज्ञान कांग्रेस इस महत्वपूर्ण कार्य में एक प्रभावी भूमिका निभा सकता है और उसे यह भूमिका निभानी भी चाहिए। भारतीय विज्ञान कांग्रेस के अध्यक्षीय संबोधन में उन्होंने कहाः ".... यदि सोचने के वैज्ञानिक ढंग को उचित तरीके से विकसित किया जाए तो इससे देश की जनता को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति के सभी लाभों को प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। लेकिन वैज्ञानिक ज्ञान का प्रसार मात्र शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं होना चाहिए। इसका विस्तार गांवों में भी प्रभावी ढंग से किया जाना चाहिए। इस क्षेत्र में भी भारतीय विज्ञान कांग्रेस अपनी प्रभावी भूमिका निभा सकता है। वैज्ञानिक सूचना का अधिक व्यापक और सुव्यवस्थित प्रसार अवश्य ही जनशिक्षा का कार्य करेगा।

23 नवंबर 2006 को कोलकाता में 89 वर्ष की आयु में चटर्जी का देहांत हुआ।

संदर्भः

1. पकराशी, एस. सी., "आसिमा चटर्जी", करंट साइंस, खंड 92, सं. 9, पृष्ठ 1310, 2007।
2. पकराशी, एस. सी., "आसिमा चटर्जी", इन लीलावती'ज डॉटर्सः द वीमेन साइंटिस्टस ऑफ़ इंडिया, संपा. रोहिणी गोडबोले और राम रामास्वामी, बेगलुरुः इंडियन एकेडमी ऑफ़ साइंसेस, 2008।
3. प्रोफाइल्स इन साइंटिफिक रिसर्च कॉन्ट्रिब्यूशन ऑफ़ द फेलोज, खंड.2, नई दिल्लीः इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी, 1995।
4. चटर्जी, आसिमा, "साइंस एंड टेक्नोलॉजी इन इंडियाः प्रेजेंट एंड फ्यूचर" (1975 की भारतीय विज्ञान कांग्रेस का अध्यक्षीय संबोधन) द शेपिंग ऑफ़ इंडियाः इंडियन साइंस कांग्रेस एसोसिएशन प्रेज़िडेंशियल एड्रेसेज़ में संकलित, खंड.2: 1948:1981, हैदराबादः यूनिवर्सिटीस प्रेस, 2003 (इस खंड में चटर्जी पर एक संक्षिप्त जीवनवृत्त भी उपलब्ध है)।
5. इंटरनेट पर उपलब्ध स्रोत।

(विज्ञान प्रसार की मासिक पत्रिका *ड्रीम 2047* से साभार)